भारतीय शिक्षा व्यवस्था, राष्ट्रीय शिक्षा नीति और भारतीय भाषाएँ

डॉ. विजय कुमार मिश्र

हाल ही में कैबिनेट ने विद्यालय और उच्च शिक्षा दोनों ही स्तरों पर शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक बदलाव और सुधार लाने के लिए जिस राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को मंजूरी दी है उसमें जो सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण पहल और प्रावधान किए गए हैं वे भारतीय भाषाओं के विकास से संबंधित हैं। इस नीति में भारतीय भाषाओं की निरंतर हो रही उपेक्षा को दूर करने के लिए अनेक नए संकल्प और संकल्पनाएँ दिखाई देती हैं। यह नई शिक्षा नीति 1986 में बनी शिक्षा नीति के आने के तीन दशक से भी अधिक लंबे इंतजार के बाद आई है। इन तीन दशकों में दुनिया पूरी तरह से बदल गई है और आज की समस्याएँ और चुनौतियाँ पहले से बहुत भिन्न हैं। इसलिए शिक्षा संबंधी प्राथमिकताओं को नए सिरे से निर्धारित करने की जरूरत थी। और इस शिक्षा नीति में ऐसा होता हुआ दिख रहा है।

इससे पहले कि नई शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं के संबंध में की गई सिफारिशों अथवा नए प्रावधानों की चर्चा करें भारत की शिक्षा व्यवस्था और उसके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य पर एक नजर डाल लेते हैं। इस संबंध में हम पाते हैं कि आधुनिक शिक्षा की नींव को यूरोपीय ईसाई धर्म प्रचारकों तथा व्यापारियों के हाथों में सौंप देना भारतीय शिक्षा व्यवस्था के व्यापक पतन का मूल कारण था। उनके द्वारा स्थापित विद्यालयों में इतिहास, भूगोल, व्याकरण, गणित, साहित्य आदि विषयों के साथ साथ ईसाई धर्म की शिक्षा भी दी जाती थी। यहीं से भारतीय शिक्षा व्यवस्था भारतीयता से दूर करने का कुचक्र प्रारंभ हुआ और भारतीय ज्ञान परंपरा, संस्कृति, आध्यात्म एवं भारतीय भाषाओं के महत्त्व कम होते गए और पूरी व्यवस्था और नीति पर अंग्रेजियत हावी होती गई।

ब्रिटिश काल की शिक्षा नीति और भाषा संबंधी दृष्टिकोण

ब्रिटिश काल में शिक्षा संबंधी महत्त्वपूर्ण दस्तावेजों में मैकाले का घोषणा पत्र (1835), वुड का घोषणा पत्र (1854), हण्टर आयोग (1882) सम्मिलित हैं। इस काल में शिक्षा का उद्देश्य अंग्रेजों के राज्य के शासन संबंधी हितों को ध्यान में रखकर बनाया गया था। प्रायः लोग इसे मैकाले की शिक्षा प्रणाली के नाम से पुकारते हैं। लार्ड मैकाले ब्रिटिश पार्लियामेंट के ऊपरी सदन (हाउस ऑफ लार्ड्स) का सदस्य था। 1857 की क्रांति के बाद जब 1860 में भारत के शासन को ईस्ट इण्डिया कंपनी से छीनकर रानी विक्टोरिया के अधीन किया गया तब मैकाले को ही भारत में अंग्रेजों के शासन को मजबूत बनाने के लिए आवश्यक नीतियाँ सुझाने का महत्त्वपूर्ण कार्य सौंपा गया था। उसने सारे देश का भ्रमण किया। मैकाले को लगा कि जब तक हिंदू-मुसलमानों के बीच वैमनस्यता नहीं होगी तथा वर्ण व्यवस्था के अंतर्गत संचालित समाज की एकता नहीं टूटेगी तब तक भारत पर अंग्रेजों का शासन मजबूत नहीं होगा। भारतीय समाज की एकता को नष्ट करने के लिए मैकाले ने वर्तमान शिक्षा प्रणाली को बनाया। अंग्रेजों की इस शिक्षा नीति का लक्ष्य था-संस्कृत, फारसी तथा लोक भाषाओं के वर्चस्व को तोड़कर अंग्रेजी का वर्चस्व कायम करना। साथ ही सरकार चलाने के लिए देशी अंग्रेजों को तैयार करना। इसके अलावा पश्चिमी सभ्यता एवं जीवन पद्धति के प्रति आकर्षण पैदा करना भी मैकाले का लक्ष्य था। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने में ईसाई मिशनरियों ने भी महत्तवपूर्ण भूमिका निभाई। ईसाई मिशनरियों ने ही सर्वप्रथम मैकाले की शिक्षा-नीति को लागू किया।

पश्चिमी शिक्षा प्राप्त लोगों की आर्थिक स्थिति और जीवन स्तर की सुधरती स्थिति को देखते हुए जनता उस ओर झुकने लगी। अंग्रेजी विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की संख्या बढ़ती गई। सरकार ने अंग्रेजी पढ़े लोगों की सरकारी नौकरियों में नियुक्ति की नीति की घोषणा कर दी। अंग्रेजी शिक्षा को अनेक स्तरों पर मिले प्रोत्साहन और अंग्रेजी साम्राज्य के विस्तार के साथ अंग्रेजी पढ़े लोगों की कर्मचारी आदि के लिए अधिकाधिक आवश्यकता एवं व्यावसायिक शिक्षा की माँग और शुरुआत आदि ने अंग्रेजी को बेहद प्रभावशाली बना दिया। 1853 में शिक्षा की प्रगति की जाँच के लिए एक समिति बनी। 1854 में वुड के शिक्षा संदेश पत्र में समिति के निर्णय कंपनी के पास भेज दिए गए। इस निर्णय पत्र में संस्कृत, अरबी और फारसी के ज्ञान को आवश्यक माना गया। किंतु इसके बाद 1882 में सर विलियम विल्सन हंटर की अध्यक्षता में भारतीय शिक्षा आयोग द्वारा माध्यमिक स्तर में शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी की सिफारिश की गई। इससे मातृभाषा की उपेक्षा होती गई। अंग्रेजी शिक्षा का माध्यम बनी रही। देश की उन्नति चाहनेवाले भारतीयों में एक व्यापक और स्वतंत्र राष्ट्रीय शिक्षा की आवश्यकता का बोध होने लगा। 1870 में बाल गंगाधर

तिलक और उनके सहयोगियों द्वारा पूना में फर्ग्यूसन कॉलेज, 1886 में आर्यसमाज द्वारा लाहौर में दयानंद ऐंग्लो वैदिक कॉलेज और 1898 में काशी में श्रीमती एनी बेसेंट द्वारा सेंट्रल हिंदू कॉलेज स्थापित किए गए।

1901 में लार्ड कर्जन ने शिमला में एक गुप्त शिक्षा सम्मेलन किया था जिसमें 152 प्रस्ताव स्वीकृत हुए थे। इसमें कोई भारतीय नहीं बुलाया गया था और न सम्मेलन के निर्णयों का प्रकाशन ही हुआ। इसको भारतीयों ने अपने विरुद्ध रचा हुआ षड्यंत्र समझा। कर्जन को भारतीयों का सहयोग न मिल सका। प्राथमिक शिक्षा में सुधार की कई बातें कर्जन की नीति में शामिल थीं किंतु जो सबसे गौर करने वाली बात है वह यह कि कर्जन का मत था कि प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से ही दी जानी चाहिए। लार्ड कर्जन ने विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा की उन्नति के लिए 1902 में भारतीय विश्वविद्यालय आयोग नियुक्त किया। इस आयोग में भी कोई भारतीय न था। इस पर भारतीयों में क्षोभ बढ़ा। उन्होंने विरोध किया। 1904 में भारतीय विश्वविद्यालय कानून बना। पुरातत्व विभाग की स्थापना से प्राचीन भारत के इतिहास की सामग्रियों का संरक्षण होने लगा। 1905 के स्वदेशी आंदोलन के समय कलकत्ते में जातीय शिक्षा परिषद् की स्थापना हुई और नेशनल कॉलेज स्थापित हुआ जिसके प्रथम प्राचार्य अरविंद घोष थे। प्रथम महायुद्ध के समाप्त होने पर कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग नियुक्त हुआ। आयोग ने कई बड़ी सिफारिशें कीं। किंतु इन सबके बीच समय के साथ अंग्रेजी का महत्त्व और वर्चस्व बढ़ता गया।

1937 में गांधी जी के द्वारा शिक्षा संबंधी विचारों पर आधारित शिक्षा की एक योजना तैयार की गई जो 1938 में बुनियादी शिक्षा के नाम से प्रसिद्ध हुई। इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया था कि शिक्षा मातृभाषा में हो, हिंदुस्तानी अनिवार्य रूप से पढ़ाई जाए। चरखा, करघा, कृषि, लकड़ी का काम शिक्षा का केंद्र हो जिसकी बुनियाद पर साहित्य, भूगोल, इतिहास, गणित की पढ़ाई हो। 1945 में इसमें परिवर्तन किए गए और परिवर्तित योजना का नाम रखा गया 'नई तालीम'। 1945 में द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होते-होते सार्जेंट योजना का निर्माण हुआ। इसमें भी छोटे बच्चों के लिए माध्यम के रूप में मातृभाषा की ही बात की गई थी।

स्वाधीन भारत में शिक्षा और भारतीय भाषाएँ

स्वाधीनता आंदोलन के दौरान भारतीय विद्वानों, नेताओं, समाज सुधारकों आदि ने पाश्चात्य शिक्षा नीति का जमकर विरोध किया था और भारतीय परिस्थिति, परिवेश एवं आवश्यकता के अनुकूल शिक्षा नीति की वकालत की थी। आजादी के बाद जब शासन व्यवस्था भारतवासियों के हाथ में आई तो राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के पुनर्गठन की माँग जोर-शोर से उठने लगी ताकि शिक्षा का स्वरूप भारतीय आवश्यकताओं के अनुरूप हो सके। भारत सरकार ने समय-समय पर राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितयों को ध्यान में रखते हुए अनेक शिक्षा आयोगों एवं शिक्षा समितियों का गठन किया जिनके सुझावों, सिफारिशों से भारत की शिक्षा व्यवस्था का निरंतर विकास होता रहा। परंतु भारतीय भाषाओं की प्रतिष्ठा को स्थापित करने के लिए, शिक्षा के माध्यम के रूप में भारतीय भाषाओं को लागू करने के लिए या सिफारिशों का, ठोस कार्य योजना का या फिर मजबूती से कार्यान्वयन का सतत अभाव ही दिखता रहा।

सर्वप्रथम राधाकृष्णन आयोग (1948-49) द्वारा उच्च शिक्षा के विकास एवं सुधार हेतु अनेक उपाय प्रस्तुत किए गए जिसमें विश्वविद्यालय के शिक्षकों के वेतनमान में सुधार, ग्रामीण विश्वविद्यालय की स्थापना, परीक्षा प्रणाली में सुधार, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना आदि शामिल थे। इस आयोग ने प्रचलित अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली का विरोध कर विश्वविद्यालयी शिक्षा हिंदी या अन्य भारतीय भाषाओं के माध्यम से प्रदान करने पर बल दिया। इसमें यह सिफारिश भी की गई कि विश्वविद्यालयों में क्षेत्रीय भाषाओं का अध्ययन, अंग्रेजी का अध्ययन और संघीय भाषा अर्थात् हिंदी का अध्ययन हो। इसके बाद 1952 गठित मुदालियर आयोग (माध्यमिक शिक्षा आयोग) ने भी कहा कि छात्रों को शिक्षा मातृभाषा, क्षेत्रीय भाषा और संघीय भाषा के माध्यम से दी जानी चाहिए।

इसी प्रकार कोठारी आयोग ने शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर विस्तृत अध्ययन किया और 10+2+3 शिक्षा प्रणाली, कॉम्प्रिहेंसिव स्कूल, पत्राचार पाठ्यक्रम, परीक्षा प्रणाली में सुधार, अध्यापकों में रिफ्रेशर कोर्स, सायंकालीन कॉलेजों की शुरुआत, तकनीकी हाई स्कूल की व्यवस्था किए जाने हेतु विविध सुझाव दिए। शिक्षा में भारतीय भाषाओं की प्रतिष्ठा के लिए जिस त्रिभाषा सूत्र की बात अक्सर की जाती है उसकी सिफारिश इसी आयोग ने की थी। इसके तहत मातृभाषा/क्षेत्रीय भाषा/प्रादेशिक भाषा, संघीय या सह संघीय भाषा तथा एक आधुनिक भारतीय भाषा अथवा यूरोपीय भाषा जो छात्र ने पाठ्यक्रम में से चुनी न हो और जो शिक्षा का माध्यम न हो के अध्ययन की बात कही गई।

भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों पर यदि हम विचार करें तो पाते हैं कि 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने लक्ष्यविहीन भारतीय शिक्षा को स्पष्ट दिशा देने का प्रयास किया। मसौदा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1979 वास्तव में 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के काफी समान थी। इस राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने व्यावहारिक क्रियान्वयन पर बल दिया। 1985 में शिक्षा की चुनौतियाँ : एक नीति परिप्रेक्ष्य नाम से एक घोषणा-पत्र जारी हुआ। इसमें शिक्षा व्यवस्था के पिछले निष्पादन पर गहराई से अध्ययन हुआ और भविष्य में शिक्षा के विकास पर भी दिशा निर्देश निर्धारित किए गए। इस घोषणा-पत्र पर व्यापक विचार-विमर्श के बाद 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनी। इस शिक्षा नीति को लागू करने के बाद भारतीय शिक्षा के इतिहास में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए जिसके अनुसार प्रत्येक विद्यालय में आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई यथा अतिरिक्त कक्षा प्रकोष्ठ, शिक्षक तथा अन्य शिक्षण उपकरण। इसके साथ न्यून अधिगम स्तर निर्धारित किए गए ताकि विद्यालयी शिक्षा में गुणात्मक सुधार

लाया जा सके। माध्यमिक स्तर पर नवोदय विद्यालय स्थापित किए गए ताकि ग्रामीण एवं पिछड़े वर्ग के बच्चों को गुणात्मक शिक्षा दी जा सके। इस शिक्षा नीति के भाग 8 में यह कहा और माना गया कि 1968 की शिक्षा नीति में शिक्षा संबंधी जो सिफारिशें की गई थीं उसका ठीक से कार्यान्वयन नहीं हुआ।

''1968 की शिक्षा नीति भाषाओं के विकास के प्रश्न पर विस्तृत रूप से विचार किया गया था। उस नीति की मूल सिफारिशों में सुधार की गुंजाइश शायद ही हो और वे जितनी प्रासंगिक पहले थीं उतनी ही आज भी हैं। किंतु देश भर में 1968 की नीति का पालन एक समान नहीं हुआ। अब इस नीति को अधिक सक्रियता और सोद्देश्यता से लागू किया जाएगा।'' (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, भाग 8)

यहीं पर हमारे लिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 और 350 (क) में हिंदी भाषा के विकास और प्रचार से संबंधित प्रावधानों को समझ लेना भी जरूरी है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 में लिखा है–''संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार एवं वृद्धि करे, उसका विकास करे ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके तथा उसकी आत्मीयता में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी और अष्टम अनुसूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पदावली को आत्मसात करते हुए तथा जहाँ तक आवश्यक या वांछनीय हो, वहाँ उसके शब्द भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से तथा गौणतया अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करें।'' (अनुच्छेद 351, भारतीय संविधान)

इसी तरह सातवें संविधान संशोधन 1956 द्वारा प्राथमिक स्तर पर शिक्षा प्रदान करने हेतु प्रांतीय भाषाओं का महत्त्व स्वीकार करते हुए अनुच्छेद 350 (क) में कहा गया है कि–''प्रत्येक राज्य तथा राज्य के भीतर स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा और राष्ट्रपति को यह शक्ति दी गई है कि वह निमित्त राज्य को उचित निर्देश दे।'' (अनुच्छेद 350 (क), भारतीय संविधान)

इन संवैधानिक प्रावधानों से हिंदी की स्थिति के साथ ही यह भी स्पष्ट होता है कि शिक्षा प्रदान करने का सर्वाधिक उपयुक्त माध्यम बच्चों की मातृभाषा ही हो सकती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 और भारतीय भाषाएँ

1986 की इस शिक्षा नीति के लागू होने के तीन दशक से भी ज्यादा समय बाद तब जबकि दुनिया पूरी तरह से बदल चुकी है और बदले हुए परिदृश्य में युगीन आवश्यकताओं और अपेक्षाओं में भी काफी बदलाव आ चुका है 2020 में आई इस नई शिक्षा नीति में शिक्षा प्रणाली में व्यापक बदलाव के बिंदु सहज ही देखे जा सकते हैं। 21वीं सदी की इस पहली शिक्षा नीति को इस तरह से तैयार करने का प्रयास किया गया है कि यह हमारे देश के विकास के लिए अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली हो। आने वाली पीढ़ी की अपेक्षाओं और आकांक्षाओं के अनुकूल हो तथा भारतीय ज्ञान और मूल्य परंपरा के विशिष्ट उपयोग से बेहतर और सुंदर राष्ट्रीय चरित्र को उभारा जा सके।

इस नीति में विभिन्न स्तरों पर भाषा संबंधी जिन बिंदुओं का समावेश किया गया है और जिस तरह से किया गया है उससे यह स्पष्ट होता है कि बहुभाषिकता को समुचित बढ़ावा दिया गया है और अध्ययन-अध्यापन में भाषा की शक्ति को प्रोत्साहित करने का संकल्प भी अभिव्यक्त हुआ है। पिछले अकादमिक ढाँचे से इतर इस नई शिक्षा नीति में शिक्षा प्रणाली को 5+3+3+4 के जिस नए शैक्षणिक और पाठ्यक्रम ढाँचे में बाँटा गया है उसमें विद्यालय से लेकर उच्च शिक्षा के स्तर तक भारतीय भाषाओं के विकास की दृष्टि से अनेक अनुकूल बिंदु शामिल किए गए हैं। इनमें कई ऐसे बिंदु भी हैं जिनको लेकर लंबे समय से भाषा और शिक्षा से जुड़े लोग माँग कर रहे थे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के मुख्य बिंदुओं में 5वीं कक्षा तक शिक्षा के माध्यम के रूप में स्थानीय भाषा/मातृभाषा को स्वीकार करना अत्यंत ही स्वागत योग्य पहल है। इससे राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया पर व्यापक और दीर्घकालिक प्रभाव पड़ना निश्चित है। यह मानव संसाधन विकास की वर्षों से चल रही प्रक्रिया को सही दिशा देने की दृष्टि से भी बेहद खास है। इससे छात्रों को उस वातावरण के साथ अपने विशिष्ट सामाजिक-सांस्कृतिक संबंध स्थापित करने में सहायता मिलेगी जिसमें वे रह रहे हैं।

प्राथमिक शिक्षा में मातृभाषा को शामिल करने से विद्यार्थियों को बेहद कम उम्र में ही एक दूसरी भाषा सीखने के बोझ से बचाकार उन्हें ज्ञान के अन्य क्षेत्र या अन्य कौशल की दिशा में खुद को आगे बढाने के लिए अतिरिक्त समय दिया जा सकेगा। इसके माध्यम से भारत के संविधान के अनुच्छेद 350 के उस प्रावधान को कि बच्चों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा के लिए हर राज्य और स्थानीय प्राधिकरण को पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान करने का प्रयास करना चाहिए, उसे भी लागू किया जा सकेगा। इसके साथ ही उनमें अपनी संस्कृति, परंपरा और विरासत के प्रति गौरव का भाव भी पैदा होगा जो राष्ट्रीय चरित्र की दृष्टि से बेहद महत्त्वपूर्ण है।

प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा को लागू करने से शिक्षा के उच्च स्तर पर अन्य भाषाओं को सीखने के लिए एक मजबूत आधार निर्धारित हो सकेगा जो बहुभाषावाद और राष्ट्रीय सद्भाव को बढ़ावा देने में मददगार सिद्ध हो सकता है। किसी भी देश की संस्कृति के उन्नयन के लिए उस संस्कृति की भाषाओं का संवर्द्धन आवश्यक है। दुर्भाग्य से भारतीय भाषाओं को समुचित ध्यान और देखभाल नहीं मिल पाई जिसे नई शिक्षा नीति में स्वीकार भी किया गया है। परिणाम यह हुआ कि बहुत सारी भाषाएँ विलुप्त हो गईं। भारत ने पिछले 50 वर्षों में 220 भाषाओं को खो दिया है। यूनेस्को ने 197 भारतीय भाषाओं को लुप्तप्राय घोषित किया है। और भी कई भाषाएँ विलुप्ति के कगार पर हैं खासकर जिनकी लिपि नहीं हैं। अब नई शिक्षा नीति में जिस प्रकार से प्राथमिक स्तर से ही भारतीय भाषाओं को महत्त्व प्रदान किया गया है उससे काफी हद तक भाषाओं

को विलुप्त होने से बचाने में भी सहायता मिलेगी।

नई शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं से संबंधित प्रावधानों के बेहतर ढंग से लागू करने के लिए कई संकल्प भी व्यक्त हुए हैं। इसके अंतर्गत सभी भारतीय और स्थानीय भाषाओं में दिलचस्प और प्रेरणादायक बाल साहित्य और सभी स्तर के विद्यार्थियों के लिए स्कूल और स्थानीय पुस्तकालयों में बड़ी मात्रा में पुस्तकें उपलब्ध कराने का संकल्प भी शामिल है। इसके अतिरिक्त प्रारंभ में ग्रेड 5 तक और बाद में ग्रेड 8 और उससे आगे तक भी जहाँ तक संभव हो शिक्षा का माध्यम घर की भाषा/मातृभाषा/स्थानीय भाषा/क्षेत्रीय भाषा होगी यह बात भी कही गई है। इस संबंध में यहाँ तक कहा गया है कि सार्वजनिक और निजी दोनों तरह के स्कूल इसकी अनुपालना करेंगे। इसके लिए विज्ञान और दूसरे विषयों से संबंधित पुस्तकें उपलब्ध कराने के लिए विशेष प्रयास की बात भी कही गई है। यही नहीं भाषा शिक्षकों की कमी को देखते हुए भारतीय भाषाओं विशेषकर संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल सभी भारतीय भाषाओं में बड़ी संख्या में भाषा शिक्षकों में निवेश के प्रयास की बात भी कही गई है।

नई शिक्षा नीति में निहित भाषा संबंधी प्रावधानों को स्पष्ट करते हुए इसमें साफ साफ कहा गया है कि संवैधानिक प्रावधानों, लोगों, क्षेत्रों और संघ की आकांक्षाओं और बहुभाषावाद और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने की जरूरत का ध्यान रखते हुए त्रिभाषा फार्मूला को लागू किए जाने की प्रक्रिया को जारी रखा जाएगा। हाँ इसमें काफी लचीलापन होगा जिससे किसी को यह न लगे कि यह उस पर जबरन थोपा जा रहा है।

भाषा संबंधी विविध आयामों को ध्यान में रखते हुए नई शिक्षा नीति में इस बात पर जोर दिया गया है कि सभी भाषाओं के शिक्षण को नवीन और अनुभवात्मक विधियों के माध्यम से समृद्ध किया जाएगा और भाषाओं के सांस्कृतिक पहलुओं जैसे कि फिल्म, थिएटर, कथावाचन, काव्य और संगीत को जोड़ते हुए इन्हें सिखाया जाएगा। भाषाओं का शिक्षण भी अनुभवात्मक-अधिगम शिक्षणशास्त्र पर आधारित होगा।

अधिक उच्चतर शिक्षण संस्थानों तथा उच्च शिक्षा के स्तर पर विविध कार्यक्रमों में माध्यम के रूप में मातृभाषा- स्थानीय भाषा का उपयोग किया जाए अथवा इन कार्यक्रमों को द्विभाषिक रूप में चलाया जाए यह निर्देश भी अपने आप में एक बड़ा कदम है। इससे भारतीय भाषाओं को मजबूती मिल सकेगी और उनके उपयोग एवं जीवंतता को प्रोत्साहन मिल सकेगा। इसके साथ ही इसमें उच्च शिक्षा व्यवस्था के अंतर्गत अनुवाद से संबंधित डिग्रियों और कार्यक्रमों को सृजित करने की बात भी कही गई है जो भारतीय भाषाओं के कार्यान्वयन की दृष्टि से अत्यंत ही आवश्यक है। वस्तुतः आज तक भारतीय भाषाओं को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सही ढंग से प्रोत्साहन नहीं मिल पाने के कारणों में एक प्रमुख कारण अनुवाद को पर्याप्त प्रोत्साहन न मिल पाना भी रहा है। इस नई शिक्षा नीति में जिस 'इंस्टिट्यूट ऑफ ट्रांसलेशन और इंटरप्रीटेशन (आईआईटीआई)' की स्थापना की बात कही गई है वह अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण है। संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल सभी भारतीय भाषाओं के लिए अकादमी स्थापित करने जैसी बड़ी बात भी इस नई शिक्षा नीति में कही गई है। हालाँकि अकादमियों के कामकाज के ढंग में बदलाव लाए बिना इससे कोई बड़ा फर्क पड़ेगा इस पर संदेह ही है।

इसके अतिरिक्त पांडुलिपियों को इकठ्ठा करना, उसका संरक्षण करना, अनुवाद कर उसके अध्ययन को प्रोत्साहित करने की बात भी इसमें शामिल है। यही नहीं पाली, फारसी और प्राकृत भाषाओं के लिए राष्ट्रीय संस्थानों की स्थापना का संकल्प भी अभिव्यक्त हुआ है। भाषा और कला संस्कृति आदि को इस तरह से इस नई शिक्षा नीति में समावेशित किया गया है कि विद्यार्थी स्वयं के सृजनात्मक, कलात्मक, सांस्कृतिक एवं अकादमिक आयामों का विकास कर सकें। नई शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं से संबंधित प्रावधानों और समग्र रूप में बहुभाषिकता को बढ़ावा देने से संबंधित जो उपाय किए गए हैं उनसे निश्चय ही भारतीय भाषाओं के परिदृश्य में बड़े बदलाव की उम्मीद की जा सकती है।

यदि भाषा संबंधी इन संकल्पों और प्रावधानों को प्रामाणिकता के साथ लागू किया गया तो भारतीय भाषाओं और समग्र रूप में कहें तो भारतीय संस्कृति को अपने खोए हुए गौरव के चिह्नों और सूत्रों को समेटने में बड़ी सहायता मिलेगी। किंतु यह भी स्पष्ट है कि इन सभी बिंदुओं को लागू करने और होने में अभी अनेक वर्षों तक निरंतर गंभीर प्रयास करने होंगे। ये सारे बदलाव तुरंत हो सकेंगे ऐसा भी नहीं है किंतु इससे भविष्य का एक सुखद और स्पष्ट संकेत जरूर मिलता है। हम आशा कर सकते हैं कि 21वीं सदी की यह पहली शिक्षा नीति एक नए भारत को गढ़ेगी। एक ऐसा भारत जिसके नागरिक अपनी भाषा, संस्कृति, परंपरा और विरासत के प्रति गौरव के भाव से संपृक्त होंगे और भारत ज्ञान के एक नए शिखर के प्रयाण पर होगा।

सहायक प्रोफेसर
हिंदी विभाग, हंसराज कॉलेज
यू-89, परिवार अपार्टमेंट, सुभाष पार्क,
उत्तम नगर, नई दिल्ली-110007
मो.-8920116822, 8585956742